# अध्याय प्रथम

## भूमिका

मानव इतिहास में नगरीकरण एक प्राचीन प्रक्रिया है और भारत में हुए आद्यौतिहासिक (Protohistory) शोध ने यह स्थाि्पत कर दिया कि नगरीय केन्द्रों का उद्भव 2200 वर्ष पूर्व सिन्धु घाटी में हो चुका था। आद्यौतिहासिक नगरीय केन्द्रों में मोहनजोदडो , हडप्पा, लोथाल थे, वहीं एतिहासिक काल में काशी, प्रयाग, पाटलिपुत्र जैसे नगरों का अभ्युदय हुआ जो धार्मिक या प्रशासनिक केन्द्र् थे। मुस्लिम काल में भी अकबर, शेरशाह सुरी के समय आगरा, दिल्ली , जोधपुर, दौलताबाद अन्य नगर बनाये गये जो मुख्यत: प्रशासनिक केन्द्र थे। वहीं ब्रिटिश काल में आधुनिक तकनीक, वैज्ञानिक ज्ञान तथा व्यवसायिक लाभ के अन्तर्गत आर्थिक लाभ के अन्तर्गत नगरीकरण की प्रक्रिया को एक नया मोड़ मिला तथा इसका आधार औद्योगिकीयकरण बन गया।

भारत के नगरों के पूर्व में महत्वपूर्ण सांस्कृतिक भूमिका तथा वर्तमान में औद्योगिक भूमिका के बावजूद नगरों का अधययन हाल में ही शुरू हुआ। भारत में सर्वप्रथम Gadgill ने 1936-37 में पूणे का सर्वेक्षण किया था। इसके पहले Sheerings ने 1868 में प्राचीन लीपी के आधार पर काशी के नगरीय जीवन की रूपरेखा खिची थी। सन् 1902 में Blackhood ने कलकत्ता के सामाजिक, आर्थिक जीवन का जिक्र किया था तथा Sorley (1933) ने बम्बई शहर का तथ्यात्मक वर्णन किया था।

मानवविज्ञान में नगरीय क्षेत्रों का अध्ययन 1960 से प्रारम्भ होता है और इसका श्रेय रेड्फील्ड की Peasant Society(1956) तथा L. Warner की Yankee city (1948) को जाता है। Warner

ने आस्ट्रेलिया के Yankee जनजाति के लोग किस प्रकार इग्लैण्ड शहर में रह रहे है उसका अध्ययन किया था| मानवशास्त्रियों का नगरीय अधययन 3 बिन्दुओं पर केन्द्रीत थे :-

( i) शहरों में रहने वाले कृषक व जनजातिय समुदाय,

(ii) समस्या केन्द्रित अध्ययन

(इन दोनों में ही प्रवासन के कारण उत्पन्न हो रही समस्याएँ जैसे आर्थिक , सामाजिक और पारिस्थितिकी अध्ययन के मुख्य केन्द्र् थे। )

(iii) परम्परागत अध्ययन – इसके अन्तनर्गत नगरीकरण के कारण परिवार, विवाह नातेदारी जैसी संस्थावओ पर पड़ रहे प्रभावों का अध्ययन किया गया।)

इसके अलावा मानववैज्ञानिकों द्वारा किये गये नगरीय अध्ययन को दो भागों में बाँटा जा सकता है

(ए)**शहर में अध्ययन**- जिसके अन्तर्गत शहर में रहने के कारण, प्रवासन, औद्योगिकीकरण के कारण आ रही सामाजिक समस्याओं का अध्ययन तथा सामाजिक संस्थाओं में आ रहे परिवर्तन का अध्ययन किया गया।

(बी) **शहर का अध्ययन**- इसके अन्तर्गत शहर की औद्योगिक स्थिति, सामाजिक स्थिति, पर्यावरणीय स्थिति और पारिस्थितिकी का अध्ययन किया गया।

उपरोक्त दिए गए अध्धयनों से यह बात स्पष्ट हो रही है कि अधिवास का अध्ययन '**शहर का अधययन**' के अंतर्गत आता है | अधिवास अथवा बस्ती शब्द अंग्रेजी भाषा के Settlement शब्द का रूपांतरण है, जो बसाव इकाई के रूप में जनसंख्या समूहन(categorization) तथा गृहों एवं मार्गों के रूप

में उन सुविधाओं को दर्शाते हैं, जो उनमें निवास व विश्राम करने वालों को सेवा प्रदान करते है। जिस स्थान पर कुछ गृह बने होते हैं वह एक अधिवास अथवा बस्ती को दिखलाते हैं। विश्राम-स्थल मानव की एक अत्यन्त महत्वपूर्ण मूलभूत आवश्यकता है। नग्न साधु-संत तथा पिग्मी सभी के लिए किसी स्थल पर नींद लेना आवश्यक है। मानव नींद लेने हेतु सुरक्षित शरण-स्थल चाहता अर्थात वह पेड़ों की डाल, गुफा, भूमिगत अथवा चट्टान काटकर बनाए गए शरण-स्थल की खोज करता है। ये शरण-स्थल मानव के सांस्कृति क्रिया-कलाप की ठोस अभिव्यक्ति के रूप में अनेक स्वरूप तथा नाम धारण करते हैं। गृह-निर्माण से ही सभ्यता की नींव पड़ती हैं जो कालान्तर में पुष्प की भाँति अनेक दिशाओं में रंगबिरगे रूप-गंध तथा सामयिक, स्थानिक विभिन्नताओं के साथ मानव-परिवेश के रूप मे विकसित होती है। यह मानववैज्ञानिक एवं तकनीक-जनित समायोजन की ठोस अभिव्यक्ति है यद्यपि सभी जीव-जन्तु अपने लिए विश्राम -स्थल का निर्माण करते हैं, जैसे घोंसले, मांद, गुफा, घर, छत्ते आदि, उदाहरणार्थ मधु-छत्ते, गौरैय्या के घोंसले, बीवर के घर, चींटी-चींटी के लघु टीले आदि, किंतु जानवरों का निर्माण कार्य तात्कालिक आवयश्कता पूर्ति हेतु अथवा नवजात शिशु के लिए होता है। वह ,एकल उद्देश्यीय होता है, जबकि मानव-निर्माण बहूद्देशीय होता है। गृहों का अधिवास के रूप में समूहीकरण,उनके विविध स्वरूपों –आकार,आकृति,प्रकार-प्रतिरूप तथा बहुविध वितरण सम्बन्धी पहलुओं–पक्षों को प्रदशित करती है-यही इस शोध अध्ययन की विषयवस्तु भी है।

किसी घुमक्कड़ जाति के टेन्ट का खूंटा, रस्सी अथवा चमड़े की छत ,इग्लू की छत ,युर्ट निर्माण, धरातल पर खुदा गड्ढा, लोयस काट कर बना गृह, चट्टान में तराशी गुफा, जंगजी शिकरी की लकड़ी-टट्टर की झोपड़ियां सभी प्रकृति के मानवीकरण के लिए साक्ष्य प्रस्तुत करते हैं। यह अधिवास इकाई एक गंदी बस्ती (Shanty town), गड़रिये की झोपड़ी, कृषक घर, आदिमजातीय एकल-गृह से लेकर विश्वव्यापी बसाव (ecumenopolish) तक की श्रेणी में कोई भी हो सकता है। इस प्रकार किसी अधिवास को यदि

वास्तविक अर्थ में समझना है, तो प्रादेशिक अथवा विश्व के सन्दर्भ में इसे अन्य भौगोलिक पहलुओं, पक्षों, जैसे-उच्चदाब, जलवायु, भू-विज्ञान एवं सामाजि-□र्थिक अवस्थाएं □दि से सह-सम्बन्धित करना □वश्यक है। गृह, सड़क तथा खेत, मानव बसाव के महत्वपूर्ण तथ्य हैं और भू-दृश्य के स्पष्ट मानव निर्मित चिन्ह हैं। अधिवासों के द्वारा मूल परिवेश में इतना अधिक परिवर्तन होता है कि नगरीय क्षेत्र में तो वायु भी परिवर्तित,दूषित हो जाती है एवं कृत्रिम गुण-स्वभाव की द्योतक बन जाती है।

मानव प्रकृति की उपज मात्र नहीं है,मानव का प्रकृति से सम्बन्ध केवल स्वयं-प्रश्नसूचक अथवा साधारण वैचारिक □दान-प्रदान-स्तर का ही नहीं अपितु अन्य उपस्थित तत्वों से बहस-परामर्श का है, जिसमें सामाजिक मानव उत्तरोत्तर विशेषाधिकार रखता है। वह इसी निषेधात्मक अधिकार को लागू करने में कितना विवेकशील है इसकी व्याख्या किसी अन्य के अपेक्षाकृत अधिवासों के स्वरूप से अधिक अच्छे ढंग से की जा सकती है। इसलिए इस विचित्र वैचारिक जगत के विभिन्न पहलुओं जैसे,प्राकृतिक, पारिस्थितिकीय,□र्थिक, भौगोलिक इत्यादि के अध्ययन के साथ अधिवास की व्याख्या □वश्यक है।

**मानव अधिवास प्रणाली :-** प्रणाली का प्रत्यय (notion) मनाव वैज्ञानिक चिन्तन के लिए नए नहीं है। विज्ञान में प्रणाली की संकल्पना (concept) का काल मनाववैज्ञानिक अध्ययनों के लिए भी लागू है। प्रणाली के रूप में की गई सोच से मनाव वैज्ञानिक समस्याओं के समाधान की स्वाभाविक रूप से प्रकट होती है। रिटर, विडाल डिला ब्लांश, ब्रून्हस, सायर □दि की रचनाओं में प्रणाली-चिन्तन (phenomenonlogy) सम्बन्धी तत्वों की पहचान करना सरल है। □धुनिक काल में मनावविज्ञान की पुनर्रचना सम्बन्धी कोई भी निर्देश तथा तात्कालिक पर्यावरणीय समस्याओं के सन्दर्भ में इसकी सार्थकता हेतु प्रणाली-विश्लेषण के उपायों को लागू करना अनिवार्य है किन्तु संयोगवश प्रणाली का प्रत्यय मनाववैज्ञानिक चिन्तन के किनारों तक सीमित रहा है उसके केन्द्र को नहीं छू सका। बीसवीं शती के

प्रारम्भ में मानव पारिस्थितिकी (human ecology) के रूप में मानवविज्ञान की एक शाखा पारिस्थितिकीय मानवविज्ञान के रूप में स्थापित की गई  इसकी व्याख्या इस दिशा में किया गया विशेष प्रयास है| कुछ मानव वैज्ञानिकों ने तो इकोसिस्टम संकल्पना के विकास हेतु टान्सली से विशेष प्रेरणा प्राप्त की है एवम्  इसे  पारिस्थितिकीय मानवविज्ञान के लिए मूलभूत संयोजक प्रत्यय माना है। इसका मुख्य कारण यह है कि इसके द्वारा हम वातावरण, मानव एवम् जीव-वनस्पति जगत को एकल ढाँचे के अन्तर्गत देख पाते हैं। इसे सामान्य-प्रणाली के सिद्धांत, गुणों से पूर्ण प्रणाली के रूप  में भी समझा जा सकता है।

यह संगठनात्मक प्रणाली समयानुसार परिवर्तनशील है। इस संदर्भ  में यह महत्तवपूर्ण रूप से समसामयिक है कि हम नगरीय अधिवासी परिवेश को बहु-आयामी संगठन प्रणाली के रूप में समझकर एकीकृत अथवा क्षेत्रीय अंतरसम्बन्धों को भौतिक सांस्कृतिक अभिलक्षणों द्वारा अभिव्यक्त करें।  ऐसे उपागम को सरलतया प्रणालीगत विश्लेषण का आधार माना जा सकता है। इसके दो मूलभूत संघटक हैं, (क) स्थानिक संरचनात्मक घटक (Indigenous structural factors) एवम् (ख) स्थानिक अन्योन्यक्रियात्मक घटक (Indigenous Interactional factor) । इस ढाँचे के अंतर्गत भू-स्थानिक प्रणाली की तीन प्रमुख उप-प्रणालियों का, जो मानव, भौतिक तत्त्व एवम् क्रियाशीलता  से सम्बन्धित हैं, विश्लेषण किया जा सकता है। बहु-आयामी स्थानिक संगठन प्रणाली को प्रतिमान के रूप  में अभिव्यक्त करके इसके ढाँचे के अन्तर्गत चार मुख्य आयामों की सहायता से किसी भी अधिवास प्रणाली के मूलरूप को आसानी से समझा जा सकता है | इस प्रकार नगरीय भू-दृश्य एक जटिल प्रक्रिया के रूप में है, जिसकी व्याख्या एवम् अनुभूति अनेक तत्तवों के स्थनिक वितरण प्रतिरूप, उनकी प्रक्रिया, गतिशील स्थानिक प्रक्रिया के रूप में की जा सकती है, जिनके द्वारा देश-कालानुसार परिवर्तनों का उद्भव एवम् नियमन होता है।

वीबर के वर्गीकृत प्रणाली में तृतीय प्रकार की प्रणाली जटिल किन्तु सुव्यवस्थित मानव अधिवास के रूप में परिलक्षित होता है। ये अधिवास संरचनात्मक स्वरूप में न केवल बहुविध सम्बन्धी आयामों को, अपितु व्यवहार, सीमा पर्यावरण,स्थिति अथवा अवस्था तथा सम्पूर्ण स्वरूप में व्याप्त विभिन्नताएं प्रदर्शित करते हैं। किन्तु समपूर्ण स्वरूप का व्यवहार उसके संघटकों के योग से कहीं अधिक भिन्न होता है। अत: किसी भी भू-दृश्य में उपस्थित प्रत्येक अधिवास का अध्ययन उसके जटिल अंतरसम्बन्धों, संयोजकता, एक-दूसरे में व्याप्त तत्वों के सम्बन्धों क्रियात्म क्षेत्रों तथा उच्च स्तर पर विभिन्न प्रकार के प्रभाव-क्षेत्रों तथा निम्न स्तर पर लम्बवत तथा क्षैतिजि सम्बन्धों सन्दर्भ में करना सटीक होता है।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि दो विलग क्षेत्र, ग्रामीण एवंम् नगरीय अधिवासीय अध्ययन एवम् शोध आपस में अवरोधी नहीं है। ग्रामीण-नगरीय अधिवास की द्वैधता किसी प्रणाली में सातत्यता के एक पक्ष को उजागर करती है, क्योंकि सेवा केन्द्रों के रूप में भी अधिवासों का वितरण-विश्लेषण शुद्ध एकल ग्रामीण तत्त्व के रूप में नहीं किया जा सकता। इन ग्रामीण-नगरीय अधिवासों के अन्तरण एवम् प्रकार्य दोनों ही अंतरसम्बन्धों एवम् अन्योन्याश्रित होते हैं। 20वीं शताब्दी के पूर्व अधिवास पारिस्थितिकीय मानवविज्ञान की शाखा के रूप में अथवा सममाननीय मानव पारिस्थितिकी रूपी तने से उत्पन्न अत्याधुनिक शाखा के रूप में, मुख्यता नगरीय मानवविज्ञान से ही सम्बन्धिटी रहा। अत: अधिवासों के सर्वांगीण अध्ययन के लिए स्थान, स्थिति, गृह,-निर्माण-पदार्थ, वास्तुकला के साथ स्वरूप,प्रकार्य, प्रकार एवं प्रतिरूप तथा अनेक गुणों की व्याख्या की विवेचना आवश्यक हैं जबकि आकारिकीय स्वरूप की जानकारी के लिए क्षेत्र विशेष के निवासी एवं निर्वसन प्रक्रिया तथा क्रमिक अधिवास-निर्माण प्रक्रिया के ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का गहन अध्ययन अनिवार्य है। जैसा कहा गया, अतीत वर्तमान को कुंजी है और हम सदैव प्रत्येक अधिवास मे कुछ न कुछ प्राचीन अवशेष पाते हैं, अत: पुरातात्विक अन्वेषण भी

लाभप्रद होता है। प्रादेश्किा विभिन्नताएँ, स्थाकि-प्रतिरूप भी परिवर्तन-क्रम के विश्लेषण हेतु महत्तवपूर्ण विषयवस्तु प्रस्तुत करते हैं। साथ ही स्थान-नाम भी अधिवासीय-क्रम का पता लगाने में सहायक सिद्ध होते हैं। इसी प्रकार प्रकार्य विश्लेषण केवल नगरीय अधिवासों के सामाजिक आर्थिक एवं संगठनात्मक ढाँचे को ही समझने में सहायक नहीं होते वरन् शहरों संगठन, उनके प्रभाव-क्षेत्र एवं अन्य सुस्ष्ट प्रखण्डों का भी चित्रण करते हैं। अर्थात नगरीय प्रदानुक्रम(succession) अथवा कोटि-निर्धारण, स्थानिक, दूरी तथा आकारिकी का अध्ययन किया जाता है। इस प्रकार नगरीय अधिवासों का अध्ययन दो रूपों में होता है, (1) विभिन्न पारिस्थितिकीय प्रक्रियाओं द्वारा विकसित स्पष्ट बनावट तथा निर्माण के साथ सम्पूर्ण जैविक इकाई के रूप में और (2) एक प्रादेशिक केन्द्र-बिन्दु एवं अलग क्षेत्रों के अन्तर्सम्बन्धित सामूहिक इकाई के रूप में, जो अपने सेवा-क्षेत्र से विविध सम्बन्धों द्वारा जुड़ा होता है।

इस प्रकार अधिवास के मापक में नगरीय मानवविज्ञान विषयवस्तु एक छोर पर आदिवासी अधिवास और दूसरे छोर पर महानगरीय अधिवास स्थित है | हैगेट ने अधिवासों को बिन्दु मानकर एक वैकल्पिक अधिवासीय वर्गीकरण प्रस्तुत किया है जो निम्नवत् है:

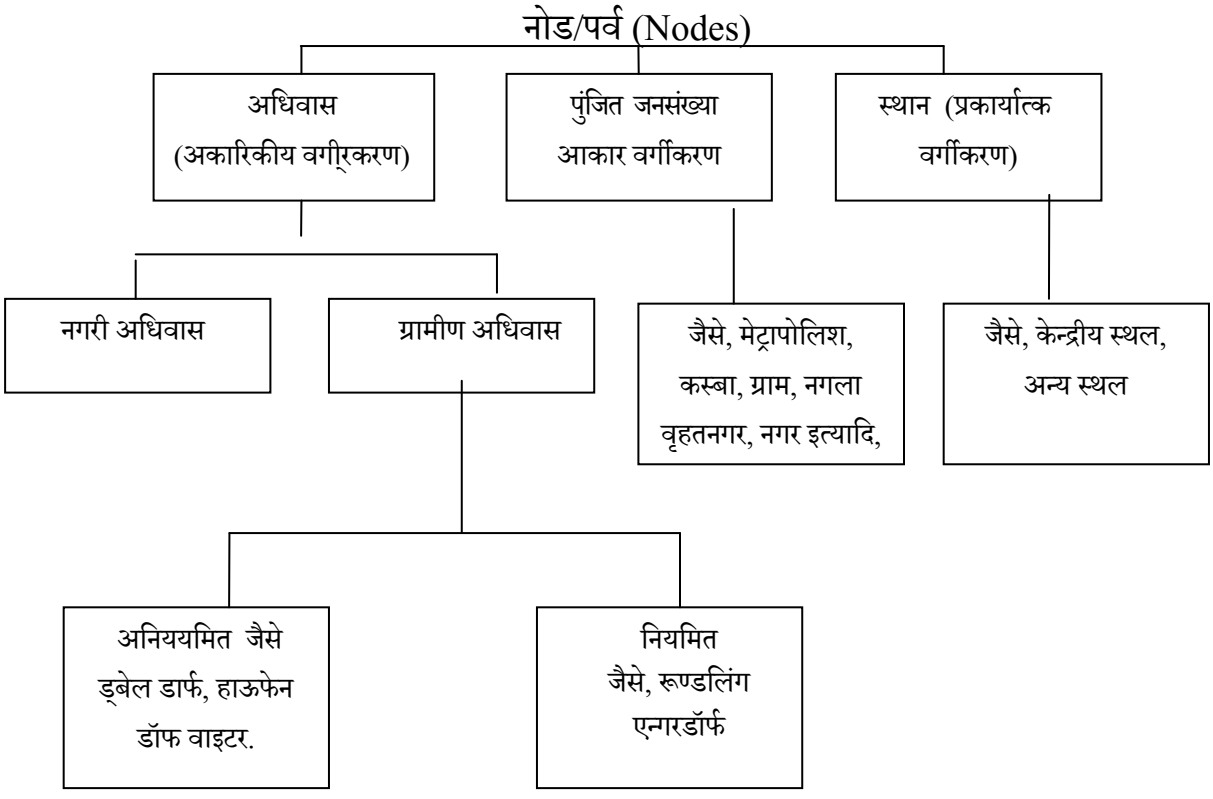

## निवास के प्रतिमान

प्राप्त सबूतों के आधार पर स्पष्ट है कि मानव ने अपनी सर्वोत्तम चाह के अनुकूल विशेष प्रतिरूप का अनुसरण करके गृह समूहों में रहना प्रारम्भ किया। सम्भवत: प्रथम प्रतिमान के रूप में उसने मध्य में खाली जगह वाले वृत्ताकार आकृति में व्यवस्थित गृह वाले गोलाकार अधिवासों का निर्माण पसंद किया। इस रणनीति से उसे जंगली जानवरों तथा शत्रुओं से सर्वोत्तम सुरक्षा मिली। भारत के आदिवासी क्षेत्रों की तथा विकासशील देशों के ग्रामीण क्षेत्रों की प्रारम्भिक आदिम बस्तियॉ इसी प्रकार के बिखरे घरों के अधिवास के रूप में व्यवस्थित मिलती हैं। मध्य प्रदेश (भारत) के गोडों की खपरैल छाजित बस्तियॉ इसके उदाहरण हैं । ऐसा प्रतीत होता है कि मानव ने सामाजिक प्राणि होने के कारण स्वभावत: अपने वंश, कुल के लोगों के साथ एक स्थान पर रहना पसंद किया। दूसरा प्रतिमान या बसाव प्रतिरूप की चाह नदी के किनारे ,समुद्र तट पर, झील या दलदल के पास के स्थान तथा जीवन-यापन हेतु संसाधनों की उपलब्धि के अनुकूल घरों के रैखिक प्रतिरूप की थी। तीसरे प्रतिमान के अन्तर्गत घरों की व्यवस्था समान्तर कतार में गली-सड़क के दोनों ओर आमने-सामने की स्थिति के साथ थी। खुली गली में बहुधंधी कार्य सम्पन्न हुए। यह केवल सुरक्षा के लिए ही नहीं वरन खेलने, बातचीत करने, अनेक कार्य सम्पन्न करने की बेहतर व्यवस्था थी।

समयानुसार सामाजिक संगठनों के विकास के साथ सामाजिक उद्देश्य की पूर्ति हेतु अनेक निर्माण जुड़ते गए। इनमें (डारमिटरी) रात्रि निवास घर, ग्राम सभा हाल, प्रधान का घर, अनाज घर, गली के मोड पर नाच घर, भूतघर, मंदिर या वंश-देवता-स्थान ,भूमि -देवी-स्थान, ग्राम की गलियों की संधि पर अथवा ग्राम सीमा के बाहर बाग के पवित्र झुरमुट में प्रमुख स्थान पर ग्राम देवी ग्राम माता आदि शामिल है | यही दशाएं, निर्माण की स्थानिक व्यवस्था की विविधता के साथ अथवा देवी-देवताओं, पूर्वजों के स्थान-निर्धारण/आबंटन की भिन्नता के साथ दुनिया के सभी आदिवासी समाज के लिए लागू हैं।

गृह अधिवास के सर्वप्रमुख घटक होते हैं तथा मार्ग एवं सड़के अधिवास की दूसरी महत्वपूर्ण घटक है। इसके अतिरिक्त बाग– बगीचे, खेत खलिहान, खेल के मैदान, उपवन आदि है।मानव बस्तियां आकार और प्रकार में भिन्न होती है। उनका परिसर एक पल्ली से लेकर महानगर तक होता है। बस्तियां छोटी और विरल रूप से लेकर बड़ी और संकुलित अवस्थित होती है। विरल रूप से अवस्थित छोटी बस्तियां, जो कृषि अथवा अन्य प्राथमिक क्रिया कलापों में विशिष्टता प्राप्त कर लेती है तो 'गांव' कहलाती है। दूसरी और कम, किन्तु बड़े अधिवास द्वितीय और तृतीय क्रिया कलापों में विशेषीकृत होते है तो इन्हें 'नगरीय बस्तियां' कहा जाता है। लागमैन भौगोलिक शब्द कोश में 'ए.एन क्लार्क' ने अधिवास को इस प्रकार परिभाषित किया है- "मानव निवास का कोई भी स्वरूप यहाँ तक कि एकल गृह भी अधिवास हो सकता है। यद्यपि वह शब्दावली प्राय: गृह समूह के रूप में प्रयुक्त होती है।" जिस अधिवास में रहने वाले सम्पूर्ण या अधिकांश लोग प्राथमिक क्रियाओं में संलग्न रहते है और उनकी जीविका का प्रधान आधार प्राथमिक क्रियाएँ होती है। उसे नगरीय अधिवास के अंतर्गत रखा जाता है। उन क्रियाओं या व्यवसायों को प्राथमिक माना जाता है। जो प्रकृति या भूमि से प्रत्यक्षत: सम्बंधित होती है। पशुओं का शिकार, मछली पकड़ना, कृषि, पशुपालन, इत्यादि प्राथमिक कार्य है। उन क्रियाओं या व्यवसायों को द्वितीयक माना जाता है। जो प्रकृति या भूमि से प्रत्यक्षत: सम्बंधित नहीं होती है जैसे उत्पाद,सेवा,वाणिज्य इत्यादि| क्रियाओं या व्यवसायों को जाति निर्धारण और सामाजिक संरचना का एक प्रमुख कारक माना गया है|

भारत के विषय में भारतीय समाज की अगर बात करे तो भारतीय समाज बहुत पुराना है और अत्या धिक जटिल है। प्रचलित अनुमान के अनुसार पांच हजार वर्ष की पहली ज्ञात सभ्यता के समय से आज तक लगभग 5000 वर्ष की अवधि इस समाज में समाहित है। इस लंबी अवधि में विभिन्न प्रजातीय लक्षणों वाले और विविध भाषा परिवारों के लोग आपस में घुलमिल गए और इस समाज की विविधता-समृद्धि और जीवंतता में अपना-अपना योगदान दिया। भारत की जिस विशेषता पर सबसे ज्यादा ध्यान

दिया जाता है वह है विविधता में उसकी एकता। इसी भारतीय समाज में व्यापक विभाजन तथा उपविभाजन जटिल तथा भ्रम उत्पन्न करने वाले है। उनके सरलीकरण का प्रयास एक बिंदू के आगे जाने पर सामाजिक यर्थात को विक्रित कर सकता है। भारत पर लिखने वाले अनेक लेखकों ने इस स्थिति का अत्यंत सरलीकरण कर दिया है। भारत को मुख्य रूप से पढ़ाई जाने वाली जाती व्यवस्था बहुत भ्रामक है। क्योंकि देखा जाता है कि यहां जातियां असंख्य हैं। (जाती को अंग्रेजी में सामान्यत: caste कहते हैं) लेकिन caste का इस्तेमाल अनेक और बहुत अलग-अलग अर्थ में किया जाता है। भारतीय समाज को वर्ण ,जाती, गोत्र तथा कुल की ईकाइयों में बांटा जाता है। जिसमें जाति की अवधारणा 'एस.सी.दुबे' ने इस प्रकार दी है – "जाती व अंर्तविवाह संघ है जो धार्मिक प्रतिष्ठा से परिभाषित होती है एवं जिसका व्यवसाय से पारंपारिक संबंध होता है।"

भारतीय संविधान में अनुसूचित जाती, अनुसूचित जनजाती तथा अन्य पिछड़ा वर्ग के संबंध में प्रावधान दिए गए हैं| इन तीनों के अलावा अन्य जो भी समुदाय व धर्म के लोग हैं उनको सामान्य वर्ग समझा जा सकता है।नदीम हसनैन ने अपनी पुस्तक सामान्य मानवशास्त्र में बताया है कि 'अनुसूचित जातियों का पद लगभग आधी शताब्दी से प्रचलित है। पहली बार इसका प्रयोग 1935 के भारत सरकार अधिनिमय में हुआ था। अप्रैल 1936 में अंग्रेज सरकार ने भारत सरकार (अनुसूचित जाति) आदेश जारी किया था जिसमें असम, बंगाल, बिहार, बंबई, मध्य प्रांत, मद्रास, उड़ीसा (ओडीशा) पंजाब और संयुक्त प्रांत के तत्कालीन प्रांतों की कुछ जातियों व जनजातियों को अनुसूचित विर्निदिष्ट किया गया था। 1950 में जो सूची बनाई गई वह पहली सूची में परिवर्तन करके बनाई गई थी। संविधान की उद्घोषणा के बाद अनुच्छेद 341 के अंतर्गत राष्ट्रपति द्वारा अधीसूचित किया गया था। धोबी, क्षत्रिय, ब्राह्मण, लोहार, तेली, कुर्मी आदि कुछ उत्तर भारतीय हिन्दू जातियाँ हैं। वैदिक समाज को श्रम विभाजन के निमित्त चार वर्णों में विभक्त किया गया था। किन्तु कालान्तर में इससे लाखों जातियाँ बन गयीं। जाति के आधार पर किसी

प्रकार का भेदभाव या पक्षपात करना जातिवाद कहलाता है। भारतीय समाज जातीय सामाजिक इकाइयों से गठित और विभक्त है। श्रमविभाजनगत, आनुवंशिक समूह भारतीय ग्राम की कृषि केंद्रित व्यवस्था की विशेषता रही है। यहाँ की सामाजिक व्यवस्था में श्रमविभाजन संबंधी विशेषीकरण जीवन के सभी अंगों में व्याप्त है और आर्थिक कार्यों का ताना बाना इन्हीं आनुवंशिक समूहों से बनता है। यह जातीय समूह एक ओर तो अपने आंतरिक संगठन से संचालित तथा नियमित है और दूसरी ओर उत्पादन सेवाओं के आदान प्रदान और वस्तुओं के विनिमय द्वारा परस्पर संबद्ध हैं। समान पंमरागत पेशा या पेशे, समान धार्मिक विश्वास, प्रतीक सामाजिक और धार्मिक प्रथाएँ एवं व्यवहार, खानपान के नियम, जातीय अनुशासन और सजातीय विवाह इन जातीय समूहों की आंतरिक एकता को स्थिर तथा दृढ़ करते हैं। इसके अतिरिक्त पूरे समाज की दृष्टि में प्रत्येक जाति का सामाजिक संगठन में एक विशिष्ट स्थान तथा मर्यादा है जो इस सर्वमान्य धार्मिक विश्वास से पुष्ट है कि प्रत्येक मनुष्य की जाति तथा जातिगत धंधे दैवी विधान से निर्दिष्ट हैं और व्यापक सृष्टि के अन्य नियमों की भाँति अटल हैं| ऐसा माना जाता रहा है कि जाति अधिवास का अस्तित्व केवल ग्राम तक ही सीमित होगा परन्तु यह भी जानना जरूरी है नगरीय क्षेत्रों में जाति कि अधिवास में कोई भूमिका रही है या नहीं|

## ➢ विषय का चुनाव

धरातल पर बसते हुए मानव कार्य-कलापों की अंतिम मंजिल उसका स्वयं कल्याण है। मानव कल्याण की प्राप्ति, स्थिर रखने, उन्नत बनाने हेतु प्रभावी बहु-आयामी कारकों की खोज के लिए अधिवास के विविध गतिशील पहलुओं का पूर्ण अध्ययन और अवलोकन की आवश्यकता है। मानव अधिवास के अध्ययन का चुनाव उसके महत्व को ध्यान में रखकर किया गया है जो निम्न लिखित है|

1. यह, सामयिक संदर्भ में लोगों के 'कहॉ' 'कैसे' तथा 'क्यों' के बारे में स्पष्ट समझ प्रदान करता है।

2. उत्पादन के प्रकार पर आधारित श्रम-विभाजन की स्पष्ट समझ प्रदान करता है।

3. व्यक्ति -केन्द्रित परिवार की उत्तारोत्तर वृद्धि, सुख संसाधनों की वृद्धि तथा प्रतिदिन के परिवर्तनशील व्यवहार के कारण अधिवास स्वयं में निहित आधुनिक आवश्यकताओं की बेहतर समझ प्रदान करता है।

4. नयी सुविधाओं की स्थापना तथा स्थानीयकरण में, जैसे-पीने का पानी, विद्युत, सिंचाई साधन तथा शिक्षा आदि, बेहतर तस्वीर प्रस्तुत करता है।

5. अधिवास तथा कृषि के परस्पर सम्बन्धों की बेहतर समझ प्रदान करता है।

6. सुनियोजित विकास के प्रभाव को बेहतर समझ प्रदान करता है।

7. अधिवासीय संरचना के साथ अर्थतंत्र की स्थानिक संरचना समन्वित करने के लिए अंतरप्रादेशिक, अंतरप्रणाली तथा अभयान्ततर सम्बन्धों तथा व्यावस्था की बेहतर समझ प्रदान करता है।

8. लोगों के सामाजिक-सांस्कृतिक मूल्यों तथा लोकाचार (ethos) की बेहतर समझ प्रदान करता है।

9. गृह-निर्माण, सफाई, स्वच्छता तथा संपूर्ण पर्यावरणीय संन्दर्भ में अधिकतम जीवन-गुणावस्था के लिए बेहतर दशाओं की खोज तथा मूल्यांकन के लिए (Comprehensiveness) व्यापक अर्थ प्रदान करता है।

10. विविध वास्तुकलात्मक प्रणालियों, उनकी सांस्कृतिक पृष्ठदभूमि के बारे में ज्ञान प्रदान करता है।

11. खण्डाधारित (Sectorial) एवं प्रशासनिक अनुस्थापन (orientation) जनित नियोजन के दखल स्वरूप अधिवासों के आकार, संरचना तथा सहलग्नता के परिवर्तनों की स्पाष्ट झांकी प्रस्तुत करता है।

**अध्ययन की आवश्यकता :** संपूर्ण मानव जाति के इतिहास के बारे में देखा जाए तो प्रारंभ से ही मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और उससे पहले वो एक जंगली प्राणी की तरह अपना जीवन बिताता था। जंगल में रहना, खाना, पीना इत्यादि कार्य करता था। पर जैसे-जैसे मानवीय जाति का विकास होता गया वैसे ही देखा गया कि मानव ने अपना संपूर्ण जीवन परिपूर्ण भाँति से सुंदरता से जीने के लिए तथा अपनी समस्या सुलझाने के लिए मानव ने अपने ही जैसे लोगों को मिलाकर एक समुदाय बनाया जिसे हम विकसित रूप में समाज कहते हैं। प्राचीन काल में देखा जाता है कि मानव ने अपना जीवन समुदाय में रहकर बिताना शुरू किया| विशेषत: भारत में देखा जाता है कि मानव को चार वर्गों में बाँटा गया यह ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्या और शूद्र इस तरह इनका वर्गीकरण किया गया पहले इस वर्ग को प्राप्त करना कर्म के आधार पर था पर कुछ समय बाद कर्म को पीछे रख यह जन्म पर निर्भर हो गया और इसी तरह चार वर्ण आज चार सौ जाति और उपजाति में बँट गए। पर एक तरफ देखा जाता है कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है वह समाज में रहकर अपने विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वह एक दूसरे से अंर्तक्रिया करते हैं। अंर्तक्रिया की प्रकिया के परिणाम स्वरूप व्यक्तियों के बीच संबंध कि जो व्यवस्था निर्मित होती है उसे समाज कहा जा सकता है। साधारण शब्दों में कहा जा सकता है कि सामाजिक संबंध के द्वारा ही समाज का निर्माण होता है। जो विशेष विचार, धर्म, इत्यादि संबंधित होता है। आधुनिक भारत में देखा जाए तो इंसान अपने कार्य के संबंध में नजदीक आया है पर वह अपने विचारों से ही अपने समाज में रहने वाले लोगों से से बहुत दूर जा चुका है। भारत में छोटे-छोटे नगरों में उपलब्ध सुविधाओं एवं बढ़ती हुई जागरूकता होते हुए भी जाति के आधार पर भेदभाव देखने को मिलता है। आज जातियों में आंतरिक पृथक्करण की प्रक्रिया सामान्य हो गई है।उपरोक्त कारणों के आधार पर जातीय अधिवास का अध्ययन करन आवयश्क प्रतीत होता है|

➢ **अध्ययन का महत्व** – यह शोध नगरीय क्षेत्र में जाति अधिवास पर केंद्रित है | नगरों का अध्ययन करने वाले विद्वानों ने नगरीय जनानकी, नगरीय अर्थशास्त्र, नगरीय भूगोल, नगरीय राजनीति एवं प्रशासन , नगरीय आवास एवं प्रबंधन , नगरीय आवस एवं नियोजन, नागरीय पर्यावरण और नगरीय समाजशास्त्र के अधार पर किया, परन्तु किसी ने भी नगरों में जातीय आधार पर अधिवास व्यवस्था का मानवशास्त्रीरय दृष्टिकोण से अध्ययन नहीं किया |इसलिए इस अध्ययन का महत्व बढ़ जाता है|

➢ **शोध प्रश्न**

उपरोक्त दिए गए विवरण तथा साहित्य पुनर्वालोकन के पश्चात मैंने यह शोध निम्नलिखित शोध प्रश्न पर केंद्रित किया है.

**क्या वर्धा ,नगरीय क्षेत्र में जातिय आधार पर अधिवास हुआ है?**

➢ **अध्ययन का उद्देश्य -:**

इस शोध का सुचारू ढंग से पूर्ण करने के लिए मैंने जातिय स्तर पर नगरीय अधिवास के प्रारूप को जानने का प्रयास किया है। शोध के कुछ महत्वपूर्ण उद्देश्य निम्नलिखित है –

- नगरीय अधिवास के वर्तमान एवं प्राचीन प्रारूप को जानने का प्रयास।
- नगरीय अधिवास पर अन्य कोई कारकों का प्रभाव।

➢ **अध्ययन की बाधाएँ** :

कोई भी शोधकार्य करते समय उस कार्य को पूर्ण करने हेतु उस शोधकार्य की बाधाएँ होती है। जैसे पैसा, समय, इत्यादी इसके अतरिक्त जो बाधाएं आयीं वो निम्नलिखित हैं:-

1) साक्षात्कार के समय ज्यादातर व्यक्ति अपने व्यवसाय में व्यस्त थे जिसके कारण साक्षात्कार को पूर्ण करने में बाधाएं आयी थी।

2) अभी तक नगरीय अधिवास पर कार्य न होने से साहित्य पूर्नावलोकन करने में बाधाएं आयी थी|

3) समय और पैसों की कमी।

4) शोध कार्य करते समय जब तथ्य संकलन करने गए तब कुछ लोगों ने अपना परिचय देने से इंकार कर दिया।

5) भाषा समझने में कठिनाई |

**********